षड्भाषामय श्रीऋषभप्रभुस्तव के कर्त्ता श्री जिनप्रभसूरि हैं

म० विनयसागर

अनुसन्धान अंक ३९ पृष्ठ ९ से १९ में प्रकाशित षड्भाषामय / अष्टभाषामय श्रीऋषभप्रभुस्तव अवचूरि के साथ प्रकाशित हुआ है । इसके सम्पादक मुनि श्री कल्याणकीर्तिविजयजी हैं । संशोधन और शुद्ध पाठ देते हुए इस स्तव को प्रकाशित कर अनुसन्धित्सुओं के लिए प्रशस्ततम कार्य किया है, इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं ।

इसके कर्त्ता के सम्बन्ध में (पृष्ठ १०) सम्पादक ने अनुमान किया है कि इसके कर्त्ता ज्ञानरत्न होने चाहिए, जो कि सम्यक् प्रतीत नहीं होता है ।

इस स्तोत्र का ३९वाँ पद्य "कविनामगर्भं चक्रम्" अर्थात् चक्रबद्ध चित्रकाव्य में कर्त्ता ने अपना नाम गुम्फित किया है । जो कि चक्रकाव्य के नियमानुसार इस प्रकार है :-

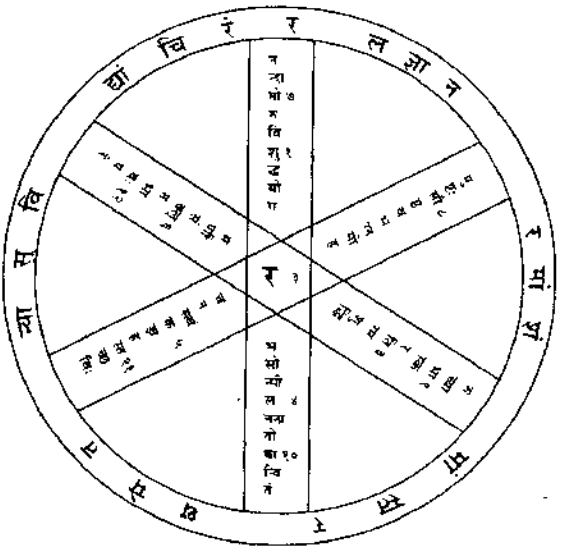

शुभतिलकक्लृप्तोऽसौ भाषास्तवः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् इस श्लोक के प्रथम द्वितीय तृतीय चरण के छठ्ठा अक्षर ग्रहण करने से 'शु', 'भ', 'ति' क्रमशः चौदवाँ अक्षर ग्रहण करने से 'ल', 'क' 'क्लृ', पुनः इन तीनों चरणों के प्रारम्भ के तीसरा अक्षर ग्रहण करने पर 'प्तो', 'सौ', 'भा' और सतरवां अक्षर ग्रहण करने से 'षा', 'स्त', 'वः' अर्थात् **शुभतिलकक्लृप्तोऽसौ भाषास्तवः** ग्रहण किया जाता है ।

इस शब्दविन्यास से शुभतिलकक्लृप्त यह भाषास्तव है ।

इसी प्रकार शुभतिलक (आचार्य बनने पर जिनप्रभसूरि) ने गायत्री विवरण लिखा है । इसमें भी शुभतिलकोपाध्याय रचित लिखा है । अभय जैन ग्रन्थालय की प्रति में इस प्रकार उल्लेख मिलता है :-

चक्रे श्रीशुभतिलकोपाध्यायैः स्वमतिशिल्पकल्पान् ।
व्याख्यानं गायत्र्याः क्रीडामात्रोपयोगमिदम् ॥

इति श्रीजिनप्रभसूरि विरचितं गायत्रीविवरणं समाप्तं ।

गायत्री-विवरण प्रो. हीरालाल रसिकदास कापड़िया सम्पादित अर्थरत्नावली पुस्तक में पृष्ठ ७१ से ८२ तक में प्रकाशित हो चुका है । उसमें पुष्पिका नहीं है ।

परवर्ती ग्रन्थकारों ने शुभतिलकोपाध्याय प्रणीत इन दोनों कृतियों को जिनप्रभसूरि रचित ही स्वीकार किया है । यही कारण है कि मैंने भी "शासन प्रभावक आचार्य जिनप्रभ और उनका साहित्य" पुस्तक के पृष्ठ ३४ पर लिखा है कि जिनप्रभसूरि का दीक्षा नाम शुभतिलक ही था, और आचार्य बनने पर जिनप्रभसूरि बने ।

प्रकरण रत्नाकर भाग-२ सा. भीमसिंह माणक ने (प्रकाशन सन् १९३३) पृष्ठ नं. २६३ से २६५ **निरवधिरुचिरज्ञानं** प्रकाशित हुआ है । जिसकी पुष्पिका में लिखा है :-

इति श्रीजिनप्रभसूरिविरचितं अष्टभाषात्मकं श्रीऋषभदेवस्तवनं समाप्तम् ।

इसी प्रकार लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृत विद्यामन्दिर, अहमदाबाद से प्रकाशित **संस्कृत-प्राकृत भाषानिबद्धानां ग्रन्थानां सूची भाग-१** (मुनिराज श्री पुण्यविजयजी संग्रह) के क्रमाङ्क १३६३ परिग्रहण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पञ्जिका नं. ६७५४/१, पृष्ठ १७६-१७७, लेखन संवत् १५८३, दयाकीर्तिमुनि द्वारा लिखित और पण्डित सिंहराज पठनार्थ की अवचूरि सहित इसि प्रति में भी जिनप्रभसूरिजी की कृति माना है। इस अवचूरि की पुष्पिका में लिखा है :- "इति शुभतिलक इति प्राक्तननाम श्रीजिनप्रभसूरिविरचित भाषाष्टक संयुतस्तवावचूरिः।" इस प्रति की अवचूरि और प्रकाशित अवचूरि पृथक्-पृथक् दृष्टिगत होती है।

इसी प्रकार श्री अगरचन्दजी भंवरलालजी नाहटा ने भी विधिमार्गप्रपा शासन प्रभावक जिनप्रभसूरि निबन्ध में और मैंने भी शासन प्रभावक आचार्य जिनप्रभ और उनका साहित्य में इस कृति को जिनप्रभसूरि कृत ही माना है।

श्री जिनप्रभसूरि रचित षड्भाषामय चन्द्रप्रभ स्तोत्र प्राप्त होता है। अतः शुभतिलक रचित इस स्तोत्र को भी जिनप्रभसूरि का मानना ही अधिक युक्तिसंगत है।

लघु खरतरशाखीय आचार्य श्रीजिनसिंहसूरि के पट्टधर आचार्य जिनप्रभ १४वीं सदी के प्रभावक आचार्यों में से थे। मुहम्मद तुगलक को इन्होंने प्रतिबोध दिया था। इनके द्वारा निर्मित विविध तीर्थ कल्प, विधिमार्गप्रपा, श्रेणिक चरित्र (द्विसन्धान काव्य) आदि महत्त्वपूर्ण कृतियाँ प्राप्त हैं। सोमधर्मगणि और शुभशीलगणि आदि ने अपने ग्रन्थों के कथानकों में भी इनको महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। इनका अनुमानित जन्मकाल १३१८, दीक्षा १३२६, आचार्य पद १३४१ और स्वर्गवास संवत् अनुमानतः १३९० के आस-पास है।

३०-५-०७

प्राकृत भारती अकादमी
१३-ए, मेन मालवीय नगर,
जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org